Subject — HISTORY
Optional Paper-II (Group-B)
(Medieval India)

स्नातकोत्तर इतिहास विभाग
वी.के.एस.यू., आरा

Unit-II
(Administration)

"मध्यकालीन भारतीय इतिहास में राज्य की प्रकृति या स्वरूप"

(Nature of State)

मध्यकालीन भारतीय इतिहास के अन्तर्गत समाहित दिल्ली सल्तनत और मुगल साम्राज्य के अधीन राज्य की प्रकृति या स्वरूप (Nature of State) का विश्लेषण करने हेतु इस समस्त कालखंड के शासन की प्रमुख विशेषताओं का सर्वेक्षण आवश्यक है।

दिल्ली सल्तनत एक धर्मप्रधान राजतांत्रिक राज्य था। यह धर्म तथा सेना की शक्ति पर आधारित था। सम्पूर्ण सल्तनत काल में इस्लाम राजधर्म रहा। राज्य में किसी अन्य धर्म को मान्यता नहीं दी गई। देश की बहुसंख्यक प्रजा हिन्दू थी और राजवंश तथा शासक वर्ग के लोग मुसलमान थे। हिन्दुओं को सभी तरह के प्रशासनिक अधिकारों से वंचित रखा गया। किन्तु डा. आई. एच. कुरेशी का मत है कि "इसका स्वरूप साम्प्रदायिक नहीं था। दिल्ली सल्तनत धर्म पर केन्द्रित (Theo centric) अवश्य थी, किन्तु पूर्णतया धर्म पर अवलम्बित (Theocratic) नहीं थी, क्योंकि धर्मावलंबी राज्य की मुख्य विशेषता यह कि उसमें निर्दिष्ट पुरोहित वर्ग का शासन होना चाहिए।" परन्तु डॉ. कुरेशी का मत तथ्यहीन और भ्रान्तिपूर्ण होने के कारण स्वीकार्य नहीं है। वास्तव में दिल्ली सल्तनत में राज्य के सभी साधन सैद्धांतिक दृष्टि से इस्लाम धर्म के रक्षार्थ एवं प्रचार हेतु थे। शासकों का आचरण भी कुरान के नियमों या 'शरा' के द्वारा नियंत्रित होता था। सुल्तान को अपने निजी जीवन के अलावे शासन में भी इन नियमों का पालन करना पड़ता था। सुल्तान राजकोष में से कई दान इस्लाम-विरोधियों को दबाने तथा इस्लाम धर्म के प्रचार के लिए देता था। सुल्तान ने अपने कार्यों को सशक्त करने के लिए कई धार्मिक कार्यालय, जैसे 'शेख-उल-इस्लाम' और 'सद्र-उस-सुदूर' खोल रखे थे। सुल्तान के नाम पर 'खुतबा' पढ़ा जाना अथवा सिक्कों पर 'कलमा' खुदा जाना धार्मिक कार्य थे। राज्य में इस्लामी सिद्धान्तों को कार्यान्वित करने के लिए 'सद्र-उस-सुदूर' को जिम्मेदारी दी गई थी। मुस्लिम उलेमा, विद्वान, शेख, मुल्ला, मौलवियों आदि के जीवन निर्वाह हेतु आर्थिक सहायता दी जाती थी। मस्जिदों का निर्माण-कार्य किया जाता था। हिन्दू शासकों के विरुद्ध युद्ध में 'जिहाद' का नारा दिया जाता था तथा हिन्दुओं पर तरह-तरह के अत्याचार किये जाते थे। इन सभी अकाट्य तर्कों के आधार पर यह स्पष्ट होता है कि दिल्ली सल्तनत का स्वरूप एक धर्मसापेक्ष

राज्य का था।

चूँकि इस्लामी प्रभुत्व सिद्धांत के अनुसार 'खलीफा' को संसार के सारे मुसलमानों का ही शासक माना गया। अतएव सुल्तानों ने इस पद का सदैव सम्मान किया। दिल्ली सल्तनत के अधिकांश सुल्तानों ने ऐसा दिखावा किया कि वे खलीफा को ही अपना वैधानिक शासक मानते थे और वे स्वयं उनके 'नायक' या प्रतिनिधि है। प्राय: सभी सुल्तान खुतबों और सिक्कों में खलीफा के नाम और स्थान देने का कार्य करते थे। इल्तुतमिश, अलाउद्दीन खिलजी, गयासुद्दीन तुगलक अपने को 'नासिर-अमीर-उलमोमिन (मुसलमानों का नेता अर्थात खलीफा के सहायक) कहते थे। अलाउद्दीन ने 'यमीन उल खिलाफत' (खलीफा का दाहिना हाथ) की उपाधि धारण की थी। इल्तुतमिश, मुहम्मद तुगलक और फिरोज तुगलक को खलीफा ने प्रमाण पत्र भेजे थे। खलीफा के प्रति सम्मान प्रदर्शित करने का मुख्य कारण यह था कि मुस्लिम प्रजा अन्धविश्वासी थी। वस्तुत: दिल्ली के अधिकांश सुल्तानों ने हृदय से खलीफा का सम्मान नहीं किया और वे नाममात्र के लिए ही खलीफा का प्रभुत्व मानते थे।

वस्तुत: दिल्ली के सुल्तान वास्तविक संप्रभु थे। इसके बावजूद सल्तनत-राज्य में अमीरों की भूमिका के कारण दिल्ली के सुल्तानों की निरंकुशता शिथिल हो जाती थी। अवध बिहारी पांडेय ने लिखा है कि "जब कोई दुर्बल शासक होता था तब अमीर (उलेमा भी) उस पर विशेष रूप से हावी हो जाते थे और हिन्दू उसके आदेशों की अवहेलना करने लगते थे। कभी-कभी कोई प्रभावशाली अमीर संरक्षक बन कर सारी शक्ति अपने हाथों में ले लेता था और वास्तविक सुल्तान को कठपुतली मात्र बना देता था।"

दिल्ली के सुल्तानों को अपने राज्य में आरंभ से ही एक व्यवस्थित शृंखला सहित शासन यंत्र का प्रबन्ध करना। इस परिप्रेक्ष्य में "सुल्तान अपने मित्रों एवं विश्वसनीय अधिकारियों की 'मजलिसे-खलवत' नामक एक परिषद् का निर्माण करते थे, जो राज्य के महत्त्वपूर्ण विषयों पर सुल्तानों को परामर्श देती थी, परन्तु सुल्तान उन को मानने के लिए बाध्य नहीं था।"

सुल्तानों की निरंकुशता पर एक सीमा यह थी कि

राज्य की हिन्दू प्रजा बहुसंख्यक थी। आई. एच. कुरेशी के अनुसार "सुल्तान भूमि को जोतने वालों, हिन्दू किसानों और उनके प्रतिनिधियों, गाँवों के मुखिया, स्थानीय प्रमुखों और कबीलों के सरदारों की उपेक्षा नहीं कर सकते थे।

राज्य की अन्तिम शक्ति मुस्लिम योद्धाओं में निहित थी, जो सुल्तान के मान-सम्मान की रक्षा के लिए अपना खून बहाते थे, अतएव कोई भी सुल्तान उनकी उपेक्षा नहीं कर सकता था।

सल्तनत-काल में सुल्तान का पद वंशानुगत नहीं था। शक्ति और योग्यता के आधार पर किसी भी व्यक्ति को शासक मान लिया जाता था। अमीरों, उलेमाओं आदि राज्य के शक्तिशाली तत्वों के समर्थन से सुल्तान की स्थिति वैधानिक हो जाती थी। यद्यपि सुल्तान को अपना उत्तराधिकारी चुनने का अधिकार प्राप्त था, किन्तु उत्तराधिकार का नियम न होने के कारण प्रायः राज्य में संघर्ष होते रहते थे तथा देश में प्रायः अराजकता का प्रसार रहता था।

मुगलकालीन राज्य का स्वरूप तुर्क-अफगान प्रशासन का प्रतिरूप नहीं था। मुगल राज्य में देशी व विदेशी तत्वों के सम्मिश्रण को इंगित करते हुए सर यदुनाथ सरकार ने लिखा है कि "The Mughal administration presented a combination of Indian and extra-Indian elements, or more correctly it was the perso-Arabic system in Indian setting." सम्राटों के शासन सम्बन्धी सिद्धांत, धार्मिक नीति, उपाधियाँ प्रदान करने के रिवाज की व्यवस्था आदि पूर्णतः विदेशी थी, परन्तु उनको भारतीयों में खपाने हेतु उन्हें देशी रूप में ढालने का सफल प्रयास किया गया था। साधारणतः आम शासन और निम्न श्रेणी के शासन में भारतीय रीति-रिवाजों की ही अधिकता थी, किन्तु उच्च श्रेणी के समाज और शाही दरबार में विदेशी व्यवस्था का वर्चस्व था।

मुगल राज्य सैनिक एकतंत्रात्मक पद्धति पर आधारित था, जहाँ राज्य का प्रधान सम्राट होता था तथा वह सेना के बल पर अपनी प्रजा पर राज्य करता था। [illegible] के

मुगल राज्य में शासन का स्वरूप

केन्द्रीय था तथा सम्राट को असीमित अधिकार थे। नियम बनाने, उनको लागू करने तथा न्याय करने के सर्वोच्च अधिकार से महिमा मंडित सम्राट सम्पूर्ण शासन-व्यवस्था की धुरी था। वह सूबेदार तथा आम उच्च कर्मचारियों को निरंतर आदेश भेजता रहता था, जिनका पालन करना प्रत्येक व्यक्ति का कर्तव्य होता था। विभिन्न विभागों में रजिस्टर रखे जाते थे तथा सम्राट एवं विभिन्न पदाधिकारियों के मध्य होने वाले पत्र-व्यवहार को संकलित किया जाता था। बहुत से पत्र तथा पत्र-व्यवहार की नकलें, रुक्के, कर्मचारियों का सेवा सम्बन्धी विवरण, फरमान और हुक्मनामा आदि प्रचलित थे। अतएव मुगल राज को कागजी राज के रूप में जाना गया।

मुगल काल में राज्य के सर्वोच्च अधिकारी मनसबदार होते थे, जो सैनिक पदाधिकारी होते थे, लेकिन उन्हें सूबेदार तक के पदों पर आसीन किया जाता था। सम्राट के दरबारों में उच्च कर्मचारी, विभिन्न विभागों के वजीर सभी मनसबदार होते थे, जिनका प्रथम पद सैनिक का था तथा आवश्यकतानुसार उनमें युद्ध-भूमि में सैन्य संचालन की योग्यता का होना आवश्यक था।

मुगलों ने भूमि कर-व्यवस्था का स्वरूप देशी रखा तथा हिन्दू-काल में प्रचलित भूमि-व्यवस्था को ही अपनाया तथा भूमि-कर हेतु अधिकतर हिन्दू कर्मचारियों की नियुक्ति की।

मुगल-राज्य में सम्राट सामाजिक सुधार अथवा उन्नति करना अपना कर्तव्य नहीं समझते थे। यद्यपि मुस्लिम समाज में सुधार अथवा उन्नति करना अपना नाममात्र का कर्तव्य समझते थे, परन्तु हिन्दुओं के समाज में उनकी नीति कम-से-कम हस्तक्षेप करने की थी। सार्वजनिक शिक्षा की व्यवस्था राज्य द्वारा न हो कर धार्मिक संस्था द्वारा की जाती थी।

मुगलों ने राज्य में न्याय की कोई समुचित व्यवस्था नहीं की थी। ग्रामीणों को अपनी पंचायत पर ही न्याय के लिए निर्भर करना पड़ता था। यद्यपि न्याय हेतु सरकार की ओर से फौजदार नियुक्त होते थे, परंतु कार्याधिक्य के कारण वे न्याय का कार्य सुचारु रूप से नहीं कर पाते थे।

मुगलों के राज्य का स्वरूप कल्याणकारी राज्य का नहीं था। कुछ विद्वानों के मतानुसार कई बादशाहों ने प्रजाहित को अपना प्रधान कर्तव्य समझा, इसलिए उन्हें स्वेच्छाचारी

उदार शासक कहा जा सकता है। कुछ का कहना है कि मुगल सम्राट निरंकुश शक्तियों के स्वामी थे, जिन पर किसी प्रकार के प्रतिबन्ध नहीं थे।

निष्कर्षतः मध्यकालीन भारतीय इतिहास के अन्तर्गत सल्तनतकालीन राज्य की प्रकृति में दैवी अधिकारों, धार्मिक ग्रन्थों की प्रधानता, उलेमाओं और मौलवियों की महत्ता, खलीफा की प्रधानता, उत्तराधिकार नियम का अभाव जैसी विशेषताएँ सम्मिलित थीं। इसके विपरीत मुगलकालीन राज्य में उलेमाओं और खलीफाओं को कोई विशेष स्थान नहीं था। इसमें सम्राट परिवर्तन धर्माधिकारियों द्वारा नहीं, बल्कि तलवार द्वारा होता था। एक सच्चे इस्लामिक राज्य के विरुद्ध इसमें हिन्दुओं को भी प्रशासकीय पदों पर नियुक्त किया जाता था। अंततः यह बात स्पष्ट होती है कि मध्यकालीन भारतीय इतिहास सम्राटों और दरबारों का इतिहास है, न कि प्रजातांत्रिक आन्दोलनों और राजनीतिक विकास का। इस युग में तथाकथित दैवी सिद्धान्त पर आधारित इस प्रकार की राजतंत्रात्मक पद्धति एक ओर जहाँ कुछ ही व्यक्तियों के स्वार्थों का पोषक थी, वहीं दूसरी ओर असंख्य मानवों की असहाय स्थिति का द्योतक भी। राज्य के स्वरूप में शामिल स्वेच्छाचारिता, निरंकुशता और दमनकारी प्रवृत्तियों से विक्षुब्ध साधारण जन इस बात से एकदम उदासीन थे कि उन पर खिलजी शासन कर रहे हैं अथवा लोदी अथवा सैय्यद अथवा मुगल। उनके लिए एक शासक उतना ही बुरा या अच्छा था, जितना दूसरा। नागरिक शासन नाम की कोई चीज नहीं थी। कोई भी साहसी सैनिक चाहे वह राजघराने का हो अथवा किसी निम्न वर्ग का — तलवार के बल पर गद्दी के लिए वह अपने राज्य की आजमाइश कर सकता था। वास्तव में सल्तनत काल और मुगल काल के राज्य की प्रकृति में सन्निहित तत्वों ने इनके उत्थान और पतन में महत्वपूर्ण भूमिका निभाई।